आत्म-हत्या

अशोक कुमार

आत्म-हत्या

'इसकी बातों में आ गए तो गुरू जमीन से भी जाओगे और जिंदगी से भी जाओगे। इन अँग्रेजी पढ़ों की करनी कुछ और कथनी कुछ और... तीर कहीं निशाना कहीं।' बंड्या ने अपनी बुझती चिलम से लगातार कश खींचते हुए कहा।

बातें लगती तो ठीक हैं, वैसे उन लोगों की।

एक ने कहा - 'यही तो करिश्मा है उन हरामियों का... अच्छे-अच्छे लगते हैं अच्छा-अच्छा बोलते हैं और फिर अच्छी तरह लूट लेते हैं।'

बंड्या दादा! तुम जो भी कहो जमीनें तो हमारी सूखी पड़ी हैं न... फसल तो हमारी अच्छी नहीं हो रही है न... पानी तो नहीं है न...! बारिश का ठिकाना ही नहीं है... तो अगर हम इस तरह मर रहे हैं तो अगर उनकी बात मान कर भी मर गए तो फर्क क्या है? हो सकता है उनकी बात में सच्चाई हो, हमारी हालत सुधर ही जाएँ।' दूसरे ने अपने मुँह से तंबाकू की पीक थूकी।

'फर्क ये है कि अभी बर्बाद होंगे तो कम से कम जमीन तो अपनी रहेगी।' बंड्या ने बुजुर्गी के लहजे में समझाया - 'उनकी मान के बर्बाद हुए तो वो तो साले हमारी जमीन भी ले जाएँगे। फिर हम खाएँगे क्या और बोएँगे क्या?'

बंड्या किसानों के बीच बैठा अपनी बुजुर्गी झाड़ रहा था। सूरज ढलने के बाद छोटे से गाँव 'चुडावा' के किसान आपस में घेरा बनाए बैठे विचार-विमर्श में थे। ये सिलसिला पिछले दो महीनों से हफ्ते में दो बार तो बन ही जाता था। कुछ किसान परेशान थे, कुछ कन्फ्यूज्ड थे, कुछ बौखलाए हुए थे। ऐसा सिलसिला तब से चल रहा था जब से महाराष्ट्र के परभणी जिले के इस छोटे से गाँव में नाथूराम बागवे और चंद्रकांत भोइर का आना जाना शुरू हुआ था।

नाथूराम बागवे कोंकण इलाके के कंकव्ली गाँव के एक मामूली किसान परिवार से था। लेकिन खेती से पूरा पड़ता नहीं दिखा तो उसके पिताजी नौकरी के सिलसिले में सतारा आए और वही बस गए। तब से खेती-बाड़ी से उन सब का रिश्ता कम हो गया था। कम हो गया था, समाप्त नहीं हुआ था। क्योंकि चाचा-ताऊ तो अभी गाँव में ही थे और खेती ही उनकी आमदनी का एकमात्र जरिया था। नाथूराम ने साइंस से एस.एस.सी. किया। केमिस्ट्री उसका रुचिकर विषय था और बॉटनी उसे निहायत पसंद थी क्योंकि उसमें पेड़-पौधों की बातें थी और पेड़-पौधों से तो उसका 'जेनिटिक' लगाव था। कृषि विज्ञान में ग्रेजुएशन उसने किया 'वरोरा' से। बाबा आम्टे के आनंद आश्रम स्थित यूनिवर्सिटी से। वहाँ उसके संस्कार सेवा से जुड़े और वहाँ उसने सीखा कि किस तरह केवल सही काम करना या किसी की सेवा कर देना या इलाज कर देना ही काफी नहीं होता, जरूरी होता है किसी शख्स या किसी स्कीम या किसी चीज को ऐसी नौबत तक पहुँचा देना जिससे वो सक्षम हो जाए, सेल्फ-सफिसिएंट हो जाए, उसे फिर किसी बात के लिए किसी सहारे कि जरूरत न पड़े। वही उसने नेचुरल/आर्गेनिक खेती के तौर तरीकों के बारे में सीखा। इंटरनेट पर भी इस सब के बारे में बहुत कुछ उपलब्ध था

इसलिए उसने तमाम लोगों के रिसर्च-पेपर्स और किताबें पढ़ी और दुनिया के तमाम कृषि विशेषज्ञों से तबादल-ए-ख्याल किए। जब उसने डिग्री हासिल कर ली, तो नौकरी के लिए जद्दोजहद शुरू हुई। उस सिलसिले में उसकी मुलाकात मुंबई यूनिवर्सिटी के कृषि विभाग के प्रोफेसर डाक्टर गोपाल पांडे से हो गई। प्रो. पांडे को नौजवान बागवे की बातें और हौसले पसंद आए और नौकरी। क्योंकि कोई खाली नहीं थी इसलिए उन्होंने इसे टेंपररी तौर पर रिसर्च एसोसिएट की जगह रख लिया।

डॉ. पांडे कृषि में पी-एच.डी थे और उनके कई रिसर्च-पेपर्स प्रकाशित हो चुके थे। एकेडमिक क्षेत्र में उनकी बड़ी धाक थी। वो हमेशा नाथूराम से कहा करते थे - 'जी लगा के मास्टर्स कंपलीट कर, दो चार रिसर्च-पेपर्स लिख। दो चार रिसर्च-पेपर्स लिखेगा, अपना कुछ नाम करेगा। कम से कम लेक्चरर तो हो जाएगा। फिर रास्ता खुला है।

'दूसरों के लिखे-पढ़े-कहे को एयरकंडीशन-लाइब्रेरी में बैठ कर कट-पेस्ट करूँ...!'

'उसे रिसर्च कहते हैं। हर एक के बस का नहीं है।'

'सर! खेती के बारे में कुछ करना है तो जमीन पे जा कर करना पड़ेगा। किसान के साथ ये अँग्रेजी में लिख कर भारतीय किसान का क्या फायदा? वो तो पढ़ा-लिखा भी शायद नहीं है...। जब मैं जमीन से जुड़ कर ऐसा कुछ कर लूँगा जिससे इस देश के किसान की तकदीर सँवर सके... तब जरूर अपने तजुर्बे लिखूँगा ताकि पढ़ने वालों को इबरत मिले! ...अभी क्या लिखूँ...?'

'तुझ से बात करना बेकार है।'

अप्रैल का महीना था। यूनिवर्सिटी में इम्तिहान हो चुके थे। मई से छुट्टियाँ होने वाली थी। नाथूराम के घर वाले शिर्डी जाने का कार्यक्रम बना रहे थे। उसी गर्मी में बड़े जोर-शोर से महाराष्ट्र के गाँवों से किसानों की आत्महत्या की खबरें आ रही थी। नाथूराम इस सब से बहुत व्यथित था। किसान आत्महत्या कर रहे थे क्योंकि उनकी फसल ठीक नहीं हो रही थी। उनके पास खाने को, अपने परिवार को खिलाने को नहीं था। बारिश दो साल से ठीक से नहीं हो रही थी। बैंक वाले किसानों को बहलाकर अनाप-शनाप कर्जे दे आए थे जो उन बेचारों ने अनजाने में ले लिए थे और अब उनके पास उसे अदा करने का पैसा नहीं था। इन आत्महत्याओं का सिलसिला बढ़ता ही जा रहा था। 'कब तक ये लोग बारिश के भरोसे जिएँगे?' नाथूराम ने अखबार फेंकते हुए कहा।

'तो तू क्या भगवान से लड़ेगा?'

'भगवान ने बुद्धि दी है, इस्तेमाल करो...! बारिश के इंतजार में बैठ कर क्या होगा।'

'ठीक है हम लोग शिर्डी चल रहे हैं न... बाबा से बारिश के लिए, सब किसानों के लिए प्रार्थना करना।'

'मैं परभणी जा रहा हूँ।'

'क्या? ...तू हमारे साथ नहीं आ रहा है?' नाथूराम की माँ को झटका लगा।

'नहीं।'

'परभणी काय को?'

'परभणी जिले में एक गाँव है चुडावा... मैं वहाँ जा रहा हूँ।'

'चुडावा क्यों"

'वहाँ किसान मर रहे हैं आई!'

'तो किसान तो बहुत जगह मर रहे हैं... चुडावा ही क्यों?'

'क्योंकि परभणी में मुझे फेसबुक पर एक मित्र मिला है जो कि किसान है और उसने खेती के नए तरीके ईजाद किए हैं। हम दोनों गाँवों वालों की मदद करेंगे। पंद्रह दिन मैं जाऊँगा, पंद्रह दिन वो जाएगा।'

'और पंद्रह दिन में किसान की तकदीर बदल जाएगी।'

'हालत तो बदल ही जाएगी।'

'तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है बागवे।'

प्रोफेसर पांडे ने लताड़ लगाई - 'तुम फेसबुक पर मिलने वालों का विश्वास करते हो? रोज पढ़ते हैं कि सोशल साइट्स पर लोग कितने 'फेक' प्रोफाइल्स बना कर बैठे हैं... और दूसरी बात, हर बार पंद्रह-पंद्रह दिन के लिए तुम्हें छुट्टी कैसे मिलेगी? यूनिवर्सिटी में कोई कानून है की नहीं।'

बात ठीक थी। नाथूराम ने माना लेकिन गाँव जाने की लालसा सारी बातों को दबा गई...।

'जाकर देखता हूँ सर! ...परभणी वाला नहीं चलेगा, न चले। मुझे साल भर की 'स्टडी लीव' मिलेगी मैं उसमें चला लूँगा। नहीं कर पाऊँगा तो वापस आ जाऊँगा लेकिन कोशिश तो करनी चाहिए न!'

प्रोफेसर पांडे हालाँकि नाथूराम को डाटते रहते थे, उससे असहमत रहते थे लेकिन दिल में कहीं नाथूराम उन्हें अच्छा लगता था। नाथू में जोश था, लोगों का भला करने कि चाह थी जो शायद प्रो. पांडे में भी थी लेकिन जिंदगी के और जीने के चक्कर में वे इस ओर कुछ कर नहीं पाए थे।

नाथूराम का परभणी का फेसबुक वाला दोस्त चंद्रकांत भोइर 'फेक' नहीं था। किसान परिवार से था। पूना विश्वविद्यालय से उसने कृषि मैं स्नातक की डिग्री ली थी। डिग्री ले कर वो अपनी जमीनों पर गाँव में वापस आ गया था। परभणी में उसका पुश्तैनी मकान था जहाँ वो लोग तीन पीढ़ियों से संयुक्त परिवार में रह रहे थे। वही पास के गाँव में उनकी अच्छी खासी खेती थी। चंद्रकांत अपने खेतों में खुद के ईजाद किए नए-नए तजुर्बे करता रहता था और उनके बारे मैं फेसबुक पर लिखता रहता था। इसी से उसकी और नाथूराम की इंटरनेट पर मुलाकात हुई थी। चुडावा के किसानों की तकलीफ ने उसे भी दुखी किया था। वो चुडावा जा चुका था। उसने वहाँ के सरपंच से किसानों की मदद की बाबत बात भी की थी लेकिन सरपंच ने चंद्रकांत के कहे को एक मामूली किसान की बातें समझ कर हँसी में टाल दिया था।

उसके बाद चंद्रकांत ने चुडावा का इरादा छोड़ दिया था। फिर अचानक नाथूराम बागवे चंद्रकांत भोइर से फेसबुक पर एक दिन फिर टकरा गया। दोनों के पास आइडियाज थे, दोनों फॉरवर्ड लुकिंग थे, दोनों में चुडावा का जज्बा फिर जाग उठा। जब मिले तो दोनों चंद्रकांत की मारुति वैन में बैठकर चुडावा गए। सरपंच से मिल कर उन्होंने सारे किसानों से मीटिंग करने की बात की।

'क्यों? ...किसानों से मीटिंग कायको? ...तुम क्या लीडर है?'

'हम किसानों को बताएँगे कि केवल बारिश पर ही निर्भर मत रहो।'

'तो ये बताने को तुमीछ माँगता है? ...मैं नहीं बताया क्या उनको?'

'हमने भी बताया तो क्या हुआ। किसी का भला होता हो तो उसमें क्या।'

'मेरा क्या?'

'मने?'

'मने मेरा क्या? ...मैं तुम लोग का 'फारमर' लोग के साथ मीटिंग बिठाएगा तो मेरा क्या? ...कितना देगा?'

'हम यहाँ लेने देने नहीं आए हैं। न हमारा इसमें कोई फायदा है।'

'आ... ए... हाय...!' सरपंच मंदार शिर्के ताली बजा कर हँसा - 'तुम्हारा कोई फायदाछ नहीं हाय...! ऐसे इ आइले तुम गाड़ी चला के इतनी दूर से...! ...चूतिया बनाते हो...! ...जाओ ...मेरे गाँव में तुम्हारा ये काला जादू चलने वाला नई हाय...!'

बहुत दलीलें दी गईं लेकिन सब बेकार। नाथूराम और चंद्रकांत के किसानों से मिलने के लिए कोई मीटिंग नहीं बुलाई गई। रात को परभणी वापस आते में दोनों ने सोचा 'न बुलाएँ मीटिंग, हम हर एक से मिलेंगे'। दूसरे दिन से सिलसिला शुरू हुआ। सुबह गाँव पहुँचते थे, हर एक के खेत में जाते थे। कोई मिला तो ठीक नहीं तो सीधे बस्ती में जाते थे और वहाँ किसी एक से अपनी बात करने लगते थे, बाकी लोग अपने आप आ जाते थे और मजमा जुटने लगता था।

'बारिश इस बार भी नहीं हुई तो।'

'तो क्या करेगा बाबा ...भगवान का जैसी मर्जी...!'

'भगवान ने पैदा किया है भगवान ने कहा है कि हर जीव के भरण-पोषण की जिम्मेदारी वो लेता है। लेकिन अगर हम हाथ पैर ही न चलाएँ तो क्या खा सकेंगे?'

'हाथ पैर तो हम चलाते हैं फिर भी अगर हमारी किस्मत में नहीं है तो हम क्या करें?'

'हाथ पैर के अलावा भगवान ने बुद्धि भी तो दी है।'

'बुद्धि से पानी बरसेगा।' एक ने कहा और सारे किसान हँस दिए। कुछ इस बहस को बेकार कहते हुए वापस चले गए, कुछ जो रुक गए वो भोइर और बागवे को बेवकूफ करार देते रहे।

पाँच-छ्ह दिन तक ऐसे सिलसिले अलग-अलग जगहों पर चलते रहे। कुछ लोग चुपचाप अब भी इन पर हँसते रहे, कुछ अब सवाल पूछने लगे, कुछ वक्त काटने के लिए वहाँ बस खड़े होने लगे।

'पानी बोरवैल में भी मुश्किल से आता है। पीने के लिए दिक्कत है ऐसे में खेती क्या करें?'

'बोरवैल में पानी, हमें मालूम है, बस 400 फुट तक ही है। थोड़े ही दिनों में समाप्त हो जाएगा। पोखर सब सूख गए हैं। तो इसकी जिम्मेदारी किसकी है? ...तुम्हारी ...सबकी।'

'कायको? ...हमारी कायको?'

'इसलिए कि जब बारिश आई, पानी बरसा, तो तुमने पानी संचय करने का कोई इंतजाम नहीं किया।'

'पानी संचय! ...अरे पानी बरसता है तो क्या बाल्टी में भर के रखूँ? ...वो कितना दिन चलेगा? ...क्या बात करता है तुम?'

'बाल्टी में रखा पानी दो दिन चलेगा।'

'चलो माना दो दिन चलेगा।'

'तो अगर पानी बाल्टी की बजाए कुएँ में भर कर रखो तो महीना भर चलेगा?'

'हाँ।'

'ऐसे ही जमीन के अंदर अगर पानी जमा करके रखो तो छ्ह महीने चलेगा। तालाब खोदकर भर लो तो साल भर चलेगा! ...फिर यदि साल भर बारिश नहीं हुई तो भी पानी की कमी नहीं होगी।'

सब किसानों ने एक दूसरे की ओर विस्मय से देखा - 'ये तो कभी सोचा ही नहीं था।'

मैंने अपने खेतों में किया है। गाँव में दो तालाब बनाए हैं। चंद्रकांत भोइर ने समझाया - 'हमेशा भरे रहते हैं इसलिए पानी की कभी भी कमी नहीं पड़ती। हम आपको बताएँगे की ये सब कैसे कर सकते हैं।~'

उस मजमे में बंड्या भी था। बोला - 'एक बात पूछूँ?'

'क्या?'

'तुम इधर कायको आया?'

'तुमको ये बताने की बारिश पर ही निर्भर मत रहो... पुरुषार्थ करो।'

'कायको?'

'माने?'

'माने हमको ये बता के तुम्हारा क्या फायदा?'

'हमारा क्या फायदा? ...कुछ नहीं।'

'ये देखो भाई लोग, बंड्या ने सब की तरफ देख कर कहा - 'ये आया अपना किराया खर्च करके, पेट्रोल फूँक के, अपना टाइम लगा के, हमारा मदद के लिए... इसमें इनका कोई फायदा नई... ये भगवान हैं! ...हैं हैं हैं हैं...!'

सब किसान हँस दिए।

मन्या नहीं हँसा। उसने कहा, 'तुम इसका सुनता तो है नई... इसे बोलने तो देओ कि ये क्या बताने आया है...।'

'ए मन्या! चुप कर! मजमे में से एक किसान ने धमकाया - 'ये शहर के पढ़े-लिखे हरामी लोग हंय... ये हमारे मित्र नय हंय... ये सब साले अपने फायदे के लिए इदर आएले हंय! इनका फायदा क्या हाय वो ये ही जानते हंय!'

मन्या चुप हो गया लेकिन शांत नहीं हुआ। उसकी जिज्ञासा ज्यों की त्यों बनी रही।

फिर एक तेज तर्रार किसान ने नाथूराम से मुखातिब हो कर कहा - 'इस गाँव में तीन आदमी आत्महत्या कर चुके हैं। हमें और आत्महत्याएँ नहीं चाहिए। तुम लोग अपना ज्ञान कही और बाँटों और यहाँ से जाओ।'

नाथूराम और चंद्रकांत दोनों मजबूर होकर वापस चलने लगे तो सरपंच ने धीरे से लेकिन जोर दे कर कहा - 'जाओ... अब आए तो अच्छा नहीं होगा।'

'एक बात मैं भी पूछूँ?' चंद्रकांत ने सरपंच से पूछा।

'क्या?'

'किसानों के फायदे से तुम्हारा क्या नुकसान होगा? गाँव के लोग समृद्ध होंगे तो सरपंच तो तुम ही हो, नाम तो तुम्हारा ही होगा।'

जवाब सरपंच के साथी से आया - 'अबे चूतिए! ...अगर गाँव वाले समृद्ध हो गए, सक्षम हो गए तो साहेब को कौन पूछेगा बे? ...हैं हैं हैं हैं...।'

सरपंच ने साथी की ओर घूर के देखा। उसका हँसना बंद हो गया। फिर सरपंच मंदार ने चंद्रकांत से कहा - 'तुम्हारा इरादा क्या है? तुम चाहते क्या हो?'

'मैं चाहता हूँ के गाँव में खुशहाली हो।'

सरपंच चुप हो गया। बगैर बोले चला गया। उसके साथी भी उसके पीछे चले गए।

उसी शाम को बंड्या ने अपने तजुर्बे से किसानों को ये समझाने की कोशिश की थी के यदि नाथूराम और चंद्रकांत की बातों में आ गए तो जान से तो जा ही रहे हो, जमीनों से भी जाओगे... क्योंकि इनकी कथनी कुछ और है, और करनी कुछ और। चाहे इत्तेफाक हो या जान-बूझ कर ये बात कुछ इतनी ऊँची आवाज में कही गई थी कि चंद्रकांत और नाथूराम सुन लें। दोनों वैन की ओर चल ही दिए थे।

'चल यार... नाथूराम से चंद्रकांत ने कहा।' दो महीने होने आए यहाँ आते-आते... जब किसानों को ही नहीं पड़ी तो हम कहाँ तक सर मरेंगे...। बंद करें यहाँ आना।'

गाड़ी का दरवाजा खोला ही था कि एक किसान मन्या के पास आया।

'आपकी बातों से मैं सहमत हूँ। हम इस तरह तो मर ही रहे हैं। आपकी बात मानने में मुझे कोई हर्ज नहीं है।'

नाथूराम की नसों में फिर जोश दौड़ गया। मन्या को दूसरे दिन से 'नाथू' और 'चंदू' ने सक्षम होने के तरीके बताए।

'पानी भगवान बरसाता है... जमा करना हमारा काम है। इसके लिए कृत्रिम तालाब बनाने चाहिए, कुएँ खोदने चाहिए, ताकि साल भर पानी मिल सके। खेती के लिए जमीन की पैदावार कैसे बढाई जाए, कौन सी फसल कब उगाई जाए, बुवाई कितनी-कितनी दूर पर की जाए, बूँद-बूँद सिंचाई के लिए व्यवस्था ऐसे कैसे की जाए कि पानी बिलकुल बर्बाद न हो। आसपास के दो किसान मन्या के कहने पर और आ गए। वे भी नाथू के बताए तरीके अपनाना चाहते थे।

'नौकरी छोड़ दूँगा, क्या मतलब?' प्रोफेसर पांडे ने नाथूराम से पूछा।

'वहाँ मेरी जरूरत है।'

'जानते हो नौकरी कितनी मुश्किल से मिलती है?'

'लोगों की सेवा का मौका भी आसानी से नहीं मिलता सर!'

'तुम तो कहते थे पंद्रह-पंद्रह दिन के लिए जाओगे! देख लिया न कि ऐसा नहीं होता! ...ऐसा करो ...छुट्टी ले लो!'

'साल भर की?'

'मैं सेंक्सन करवा दूँगा।... रिसर्च करो, स्टडी करो... जो भी करो बस इस तजुर्बे को लेकर एक किताब या पेपर पब्लिश कर देना।'

'बिलकुल करूँगा...! थैंक यू सर!' नाथूराम ने पांडे जी के चरण छुए। गुरु ने आशीर्वाद दिया।

नाथूराम और चंद्रकांत का काम चुढावा गाँव में तकरीबन साल भर चला। इस बीच जितनी भी बारिश आई उससे कृत्रिम तालाबनुमा बनाए गए और खेती के और सिंचाई के तरीके बदले गए। जब फसल जमने लगी तो और किसानों की नजरों में चढ़ने लगी। एक दिन एक सरपंच का आदमी मिला - 'किसानों से मिलते हो... साहेब से भी तो मिलो।'

लगातार मेहनत के बाद मन्या और आसपास के लोगों की फसल अच्छी हुई और उन्हें पानी की तकलीफ भी नहीं हुई। इतना इंतजाम हो गया था कि यदि बारिश अगले साल तक न हो तो भी वे अपनी पानी की जरूरत पूरी कर लेंगे।

एक दिन शाम के मन्या के खेत के पास चंद्रकांत और नाथूराम बैठे भाखरी और पिठ्ला खा रहे थे कि गाँव के कुछ किसान आए और उन्हें घेर कर खड़े हो गए। नाथू ने देखा लेकिन उन पर ध्यान नहीं दिया। वो सर झुका कर खाने में लगा रहा।

'साहेब!' एक किसान ने पुकारा।

'क्या?'

'मन्या की खेती देख कर हम आपके पास आए हैं।'

'अच्छा...!'

'हम अपनी जमीन के कागज लाए हैं। ये भी ले लेओ... हमारी जमीन पर भी ऐसी ही फसल पैदा करो...।'

'हम तुम्हारी जमीन के कागजात ले कर क्या करेंगे?'

'तो क्या तुम हमारी जमीनें नहीं लोगे"

'हम तुम्हारी जमीन का क्या करेंगे?'

'हमको बताया गया था कि तुम हमारी जमीने ले लोगे।'

'जमीनें तुम्हारी हैं ...मैं कैसे ले सकता हूँ... मुझे तुमसे कुछ नहीं चाहिए... तुम खुशहाल हो जाओ... बस।'

दूसरे दिन से गाँव के बचे हुए दूसरे खेतों पर काम शुरू हो गया। भगवान ने भी मदद की और अषाढ़ में बारिश हो गई, जमीनें गीली हो गई और कुछ-कुछ कुओं में भी पानी भर गया।

इसी साल दो महीने बाद सरपंच के चुनाव भी होने थे। चुनाव में मंदार शिर्के को इस बार भी निर्विरोध चुने जाने का पूरा भरोसा था। लेकिन गाँव वाले कुछ और सोच रहे थे।

'देख रहे हो दादा क्या हो रहा है तुम्हारे आसपास?' मंदार के सहयोगियों में से एक ने एक दिन कह ही दिया।

'क्या?'

'गाँव वालों में भावना ये है की बंड्या को भड़का कर तुम्ही ने नाथूराम और चंद्रकांत के खिलाफ 'पोपोगंडा' करवाया था।'

'किया तो सालों ने काम...! उनको रोका किसी ने?'

'बस! और उनका काम हो गया।'

'क्या मतलब?'

'मतलब ये की सारे गाँव वाले बंड्या को नाम धर रहे हैं और तुम्हारे नाम से थू- थू कर रहे हैं। वो कहते हैं कि तुम्हारे ही कारन गाँव की तरक्की में देर हुई। तुम आने देते तो चंदू और नाथू बहुत पहले ही काम शुरू कर देते। ...लोग मन्या को सरपंच बनाने के चक्कर में हैं।'

'ऐसा!'

'ऐसा ...तो सोच लो ...ये जो किसानों की आत्महत्या के नाम पर, गाँव में सूखे के नाम पर, डेव्लेपमेंट के नाम पर... जिस-जिस नाम पर जो-जो सरकारी, गैर-सरकारी रकम आती है वो तो जाएगी ही, जो इधर-उधर कटौती करके आपके खाते में जाती है वो भी जाएँगी!'

'ऐसा!'

'ऐसा ...लाखों का मामला अचानक ठप्प हो जाएगा। ...फिर हमारा सोचो... हमारा क्या होगा? ...हम तो आपसे ही बंधेले हैं।'

'ठीक है!' मंदार ने दूर अंतरिक्ष में देखते हुए गहरी सोच के साथ कहा। चार दिन बाद नारियली पूर्णिमा थी। बहन का सख्त बुलावा था। नाथूराम और चंद्रकांत को राखी बँधवाने परभणी जाना ही था। सुबह-सुबह का वक्त था। मौसम में हल्की-हल्की फुहारें थी और हवा में जरा-जरा ठंडक। दोनों वैन में बैठकर परभणी के लिए चल दिए। वैन गाँव से निकल कर सड़क पर मुड़ने को हुई ही थी कि दाईं तरफ से न जाने कैसे पूरी रफ्तार से दौड़ता हुआ एक ट्रक आया और वैन से पूरे जोर से टकरा गया। मारुति वैन के परखच्चे उड़ गए और उसमें बैठे दोनों नौजवान हमेशा के लिए गाँव से क्या दुनिया से ही चले गए।

उस दिन गाँव की लड़कियों ने शोक-दिवस मान कर अपने भाइयों को राखी नहीं बाँधी और न गाँव के किसी घर में रात को चूल्हा ही जला। इस साल जब गणपति बैठाए गए तो झाँकियों में चंदू और नाथू के पुतले बनाकर भी रखे गए। समय गुजरता गया लेकिन फिर कभी चुडावा गाँव से किसी किसान के आत्महत्या की खबर नहीं आई।

https://www.hindiadda.com/aatm-hatya/